ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-7* September- 2020
Innovation The Research Concept

# हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाओं में अभिव्यक्त स्त्री चेतना

# Female Consciousness Expressed In The Autobiographies of Hindi Writers

Paper Submission: 12/09/2020, Date of Acceptance: 26/09/2020, Date of Publication: 27/09/2020

**गरिमा कंचन**
शोधार्थी
हिन्दी विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय का
लखनऊ, यू.पी., भारत

**सारांश**

इस लेख के माध्यम से हिन्दी लेखिकाओं के जीवन–यर्थाथ को प्रस्तुत किया गया है कि किन परिस्थितियों और विसंगतियों होनें को इन लेखिकाओं ने सहा और सहते हुए अपने जीवन और कैरियर को दिशा दी। प्रतिभा अग्रवाल की आत्मकथा उनके अभ्युदय और उत्थान की कथा है । कुसुम असंल की आत्मकथा उनके सघर्षों की गाथा है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की आत्मकथा लिगंभेद तथा शोषण–उत्पीड़न की कहानी है। कृष्णा अग्निहोत्री या मन्नू भण्डारी ने जहॉ समाज और साहित्य जगत की विसगतियों को उजागर किया वही, प्रभा खेतान ने व्यवसायिक जगत में व्याप्त विसंगतियों और नारी के प्रति उपेक्षा भाव को उजागर किया है।

Through this article, the life-stories of Hindi writers have been presented as to what circumstances and anomalies these writers endured and endured, giving direction to their life and career. Pratibha Aggarwal's autobiography is a story of her rise and rise. Kusum Asal's autobiography is the saga of his conflicts. Chandrakaran Saunrexa's autobiography is a story of leg-lapse and exploitation-oppression. Krishna Agnihotri or Mannu Bhandari exposed the vistas of society and literature, Prabha Khaitan has exposed the discrepancies prevalent in the business world and neglect towards women.

**मुख्य शब्द :** स्त्री लेखिकाओं, आत्मकथा, पारिवारिक, शोषण–उत्पीड़न ।
Female Writers, Autobiography, Family, Exploitation-Harassment

**प्रस्तावना**

स्त्रीविमर्श की तमाम धारणाओं से, विमर्शो से और परिभाषाओं से अलग एक बड़ी बात यह है कि स्त्री होना सिर्फ वेदना नहीं, चेतना भी है, फर्क यह है कि हर स्त्री अपनी क्षमता और सामर्थ्य के अनुसार इस चेतना से ओत–प्रोत होती है। आत्मकथा–लेखिकाओं की बात करें तो चन्द्रकिरण सौनेरेक्साजी इस चेतना से ओत–प्रोत होते हुए भी अपनी यातना को दूर नहीं कर पायी और इस यातना में डूब गयी। मन्नू भण्डारी ने तीस वर्षों के बाद इस चेतना को ग्रहण किया। प्रभा खेतान तोड़ने की कोशिश करते हुये भी इस चेतना को व्यक्तिगत तौर पर न अपना पायीं, यद्यपि व्यवसायिक जीवन में उनकी चेतना ने परचम फहराया। मैत्रेयी पुष्पा ने जरूर अलग किया और इस चेतना को ओढ़ लिया। कुसुम असंल ने कोशिश की ,फिर भी सफलता पूर्णतया नहीं प्राप्त कर पायी।

**अध्ययन का उद्देश्य**

इस लेख के माध्यम से हिन्दी साहित्य में अभिव्यक्त स्त्री लेखिकाओं के जीवन चित्रण को प्रस्तुत करने की कोशिश की गयी है। इस जीवन चित्रण को समाजशास्त्रीय अध्ययन के माध्यम से यह जानने की कोशिश की गयी है कि स्त्री जीवन किन विसंगतियों और विडम्बनाओं का शिकार रहा है और समता और अपने अधिकार के लिए लड़ रहा है। स्त्री जीवन के उत्पीड़न के खिलाफ स्त्री अधिकारों के लिए लेखिकाओं ने जो लिखा उनको जांचने या समाजशास्त्रीय अध्ययन करने के लिये यह लेख प्रस्तुत किया गया है।

**विषय विस्तार**

इस चेतना का तात्पर्य यह कतई नहीं है कि वैवाहिक जीवन या पति से अलगाव ही नारी–चेतना है। इन तमाम किसने बनाये, कोई नहीं जानता। बस सभी स्त्री– पुरूष को इसके पालन करने की सीख जरूर दी जाती है। ये नैतिक मूल्य इतने गहरे बसे हैं कि बच्चे के जन्म से पहले ही अपनी परिधि में उसे समेट लते हैं। हिन्दू धर्म के संस्कारों में (सोलह संस्कार) इनकी झलक देखी जा सकती है। सबसे बड़ी बात यह है कि अंश के गर्भ में आने के साथ–साथ उसके लिये संबोधन भी पुरूषवादी होता है जैसे बच्चा होने वाला है।बच्ची होने वाली है ऐसे संबोधन क्यों नहींहै ?जिस समाज में महिला दोयम दर्जे पर हो, वहाँ ये दंश होंगे ही। ये आत्मकथा लेखिकायें, जो कि लगभग अच्छे पढ़े –लिखे परिवारों से है, के अलावा हर नारी अपने जीवन में ये दंश झेलती है, फर्क यह है कि इन लेखिकाओं की चेतना और संवेदना तीव्र थी अतः उन्होंने इन पर प्रतिक्रिया की, नहीं तो हम, हमारी माँ, उनकी माँ और इस तरह न जाने कितनी पीढ़ियाँ दंश झेलती आयीं हैं। बात उस चेतना और पितृसत्तामक समाज की थी, जिसमें इन लेखिकाओं ने सांस ली और उस समाज का सामना किया। इस समाज के कुछ मूल्य सभी नारियों के लिये समान हैं, चाहे वह गाँव की हो, शहर की हो, पढ़ी– लिखी हो या अनपढ़ हो, गरीब घर से हो या अमीर घर से। लिंग भेद उसे सहना ही होगा, घर के काम करने ही होंगे। धार्मिक कृत्यों को निभाना ही होगा। पति की सेवा करना, पतिव्रता, चरित्रवान, एकनिष्ठ और पर पुरूष से दूरी बनाये रखना आदि तमाम बातों का पालन करना होगा। विवाह पूर्व सम्बन्ध ,विवाह के पश्चात् प्रेम और संबध ये सब उसके चरित्र को हीन बनाते हैं। पति के अतिरिक्त किसी से प्रेम, सम्बन्ध, निकटता नारी के चरित्र के कलुषित पक्ष माने जाते हैं। इन सब बातों का सामना इन लेखिकाओं को करना ही पड़ा, इसीलिये सबके जीवन में असमानता होते हुये भी समानता है।

लगभग सभी लेखिकाओं का जीवन अपने स्तर पर संघर्ष का जीवन रहा है। यह अलग बात है कि उनके संघर्ष के मायने तथा संघर्ष के हथियार और संघर्ष के प्रति गहनता, भिन्न–भिन्न रही हैं। इस सन्दर्भ में प्रतिभा अग्रवाल का संघर्ष स्वप्न की यथार्थ में परिणति का रहा। प्रतिभा अग्रवाल की आत्मकथा का प्रथम खण्ड 'दस्तक जिन्दगी की' में उनके बचपन से लेकर विवाह तक के जीवन संघर्ष और स्त्री चेतना का वर्णन है। दूसरे खण्ड 'मोड़ जिन्दगी का' में उन्होंने अपने वैवाहिक जीवन तथा कैरियर के दौरान के जीवन संघर्षों का वर्णन किया है। प्रतिभा जी का बचपन संघर्षों से परिपूर्ण था। वे जब पांचवी कक्षा में पढ़ रही थी तभी मां यक्ष्मा की रोगी होकर बिस्तर पर पड़ गयी। माँ की देखभाल की जिम्मेदारी प्रतिभा जी के कन्धों पर आ गयी। प्रतिभा जी जब दस वर्ष की थी तभी उनकी माँ का निधन हो गया था।

मदन बाबू से जब उनकी भेट हुई तो मदन बाबू के व्यक्तित्व ने प्रतिभा जी को आकर्षित ही नहीं किया, बल्कि इसकी परिणति विवाह में हुई–''वे दिल से सुधारवादी थे, स्त्री–पुरुष की समझौता के हिमायती थे और इसे उन्होंने व्यवहार में उतारा। बिना दहेज के, बिना पर्दे के विवाह किया, अपने घरवालों की अनिच्छा के लेखिकाओं की अनेकों समस्याओं के बीच जो मूल समस्या है। वह है पितृसत्तामक समाज के नैतिक मूल्य। ये मूल्य बावजूद अपनी मर्जी से अपनी पसन्द की लड़की से विवाह किया, विवाह के पन्द्रह दिनों के बाद ही उसे स्कूल में भर्ती कराया, अगले साल पढ़ने के लिए शांतिनिकेतन भेज दिया, बाद में अभिनय करने के लिए हर तरह अनुकूल वातावरण बनाया, उसे लोगों से मिलने–जुलने की पूरी स्वतंत्रता दी।''[1] किन्तु ये स्थितियाँ बहुत दिनों तक नहीं चल सकी। मदन जी ने जो स्वतंत्रता प्रतिभा जी को दी थी, वह धीरे–धीरे पति–पत्नी के बीच झगड़े और मनमुटाव का कारण बन गयी। धीरे–धीरे पति–पत्नी में प्रतिभा जी के नाटक को लेकर, पुरुषों के साथ मैत्री को लेकर झगड़े होने लगे। प्रतिभा जी के लिए यह सिर्फ असहनीय ही नहीं था, बल्कि पति के व्यक्तित्व में दोहरेपन को लेकर वह आश्चर्यचकित थीं।

मदन जी के व्यक्तित्व की एक और बात ने प्रतिभा जी को आश्चर्यचकित किया। वह पति जिसने सुहागरात के दिन पत्नी को फाइल और बंडल दिया, जिसमें उनकी प्रेमिका द्वारा लिखे गये पत्र थे। उन्होंने प्रतिभा जी से कुछ भी नहीं छिपाया, वही पति प्रतिभा जी को अपनाने के पीछे निहित उद्देश्य भी 1942 की डायरी में स्पष्ट करते हैं–Pick flower from the street and make a diamond out of it.'रास्ते की फूल' की इस सोच ने प्रतिभा के प्रेम को ठेस ही नहीं पहुँचायी बल्कि मर्माहत भी किया। किन्तु प्रतिभा जी ने इसे फिर भी मदन जी की सुधारवादी दृष्टि और उदारताबोध को ही कारण माना और पति द्वारा किए गये योगदान को सराहा। किन्तु फिर भी उनका व्यक्तित्व और कैरियर सिर्फ पति की देन मानना उनकी प्रतिभा पर प्रश्नचिन्ह लगाना था। मदन जी के तमाम मित्र उनसे कहते थे कि प्रतिभा को बनाने का श्रेय मदन जी को है, प्रतिभा जी जैसी प्रतिभा सम्पन्न तथा गुणी महिला के आत्मसम्मान के यह असहनीय था।

प्रतिभा जी ने पारिवारिक जिम्मेदारियाँ पूरी करते हुए अपनी पढ़ाई और रंगमंच से जुड़ाव जारी रखा। शान्तिनिकेतन में उनकी पढ़ाई, रंगमंच में लगातार उपस्थिति, बच्चों का जन्म, भाईयों की मृत्यु आदि तमाम संघर्ष साथ–साथ चलते रहे। कई बार ऐसी स्थितियाँ आयीं, जब पारिवारिक दायित्व और रंगमंच दोनों को साथ–साथ ले चलना मुश्किल था। फिर भी प्रतिभा जी ने सब कुछ संभाले रखा। प्रतिभा जी को सदैव प्रोत्साहित करने वाले तथा अवसर प्रदान करने वाले मदन बाबू का हार्ट अटैक से देहान्त होना, प्रतिभा जी के लिये पहाड़ टूट पड़ना था। वे लिखतीं हैं, ''शायद वह व्यक्ति मेरे मन को इतना भर गया था कि उसकी शारीरिक अनुपस्थिति ने मुझे उतना खालीपन नहीं महसूस होने दिया''[2]। मदन जी ने सिर्फ सहयोग ही नहीं किया, बल्कि कई बार उनके विचारों और स्वप्नों को मूर्त्त भी किया। नाट्य शोध संस्थान में निर्माण के बारे में उन्होंने मदन बाबू को बताया, तो वे बोले, ''तुम क्या करना चाहती हो। मुझे विस्तार से बताओ, तब मैं व्यवस्था कर दूंगा। पर उसके बारे में कोई ठोस कदम उठाने से पहले वे चले गये।

''डॉ0 प्रतिभा अग्रवाल की आत्मकथा उनके बचपन, घर परिवार से संबधित सुखद–दुखद अनुभवों का

लेखा–जोखा ही नहीं प्रस्तुत करती, बल्कि एक नारी के आत्मविश्वास पूर्ण अभ्युदय एवं उत्थान की गाथा भी कहती है।''[3]

कुसुम अंसल की आत्मकथा 'जो कहा नहीं गया' उनके आत्मसंघर्षों का दस्तावेज है जिसमें अकेलापन सदैव उनके साथ बना रहा। वे लिखती हैं, ''भयानक अकेलापन मेरी साधना में मेरे साथ था– अकेली चली मैं उस राह पर''।[4] कुसुम अंसल का बचपन भी प्रतिभा अग्रवाल की तरह संघर्षमय रहा, जहाँ प्रतिभा अग्रवाल को अपनी माँ का सानिध्य मात्र दस वर्ष की आयु में खोना पड़ा, ,वहीं कुसुम असंल की माँ उनके जन्म के 10 महीने बाद ही स्वर्ग सिधार गयीं। प्रतिभा अग्रवाल को दादी तथा बड़ी बहन का स्नेह व सानिध्य मिला, वहीं कुसुम असंल इनसे वंचित ही नहीं रहीं, बल्कि सौतेली माँ की उपेक्षा व फटकार भी सहती रहीं। वे अमीर के घर में गरीब बेटी की तरह रहती थीं।

आगे उनकी बुआ व फूफा जी ने उन्हें गोद ले लिया और बड़े प्रेम, स्नेह और शानो शौकत से उन्हें रखा, किन्तु यह खुशी बहुत दिन नहीं रही। बुआ के माँ बनने के बाद कुसुम जी के पिता ने उन्हें वापस बुला लिया और पुनः वे कठिनाइयों से दो–चार होने लगीं। पिता और माँ की इच्छा के बिना न तो वे पढ़ाई कर सकती थीं और न ही कहीं आ जा सकती थीं। पिता की जिद के चलते उन्हें साइंस छोड़कर आर्ट्स में प्रवेश लेना पड़ा। यह बात उनकी मनःस्थिति को बहुत व्यथित करती रही।सौतेली माँ उनके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करती थी, न ही उन्हें अपने साथ कहीं ले जाना चाहती थीं। उन्हें कालेज में किसी भी प्रकार की गतिविधियों में भाग लेने की इजाजत नहीं थी। उनको सूती साड़ी व रबड़ की चप्पल पहनकर कालेज जाते देखकर उनके बड़े भाई जो कि लंदन में पढ़ाई कर रहे थे, को शर्म महसूस हुई। कुसुम जी कपड़ों के इस आत्मसम्मान की जगह व्यक्तित्व के सम्मान को आगे बढ़ाने का प्रयास करने लगी। माँ की कमी, परिवार में स्नेह के अभाव ने उनके मन को अध्ययन में रत रहने के लिये प्रेरित किया। वे मनोविज्ञान में एम0ए0 करने लगी। इस समय उनकी शादी की बात होने लगी। किन्तु साधारण रूप –रंग ने यहाँ भी उनके लिये तमाम चुनौतियाँ खड़ी कर दीं। जहाँ प्रतिभा अग्रवाल को मदन जी का प्रेम–सानिध्य शीघ्रता से मिल गया, वही कुसुम जी के लिये यह संघर्ष था। कुसुम जी ने इन सब को दर किनार कर अपना मन पढ़ने में तथा साहित्य सृजन में करने का प्रयास किया।

कुसुम जी का लंदन में अपने भाईयों के समान पढ़ाई करने के विचार को यह कहकर खारिज कर दिया गया कि लड़कियों को कौन विदेश भेजता है? इतना ही नहीं जब वे मनोविज्ञान में प्रथम श्रेणी में परास्नातक उत्तीर्ण हुयीं तो परिवार में अभिवादन व बधाई मिलना तो दूर, बल्कि तमाम उलाहनाओं को उन्हें सहना पड़ा। तमाम तरह की उपेक्षा व लिंग भेद न होता तो कुसुम जी इसी विषय में अपना कैरियर बना सकती थीं। पर उनकी इच्छा के विरूद्व उनका विवाह परम्परागत ढंग से दिल्ली के सुशील असंल के साथ तय दिया जाता है। वे प्रेम की जिस धारा को लेकर सुशील जी के घर आयी थीं, वह पति के कैरियर, पारिवारिक जिम्मेदारियों के नीचे दब गयीं। धीरे–धीरे परिवार की जिम्मेदारियों में उनके अस्तित्व की चाह समाप्त होने लगी। इसी बीच वे दो बेटियों की माँ बन गयी किन्तु उन्हें पुत्र प्रणव को जन्म देने के बाद ही पति व सास से सम्मान मिला।

कुसुम जी ने रंगमंच ही नहीं, साहित्य के क्षेत्र में भी अपना प्रयास प्रारम्भ किया। उनका उपन्यास 'अतीत के अंचल' जब प्रकाशित हुआ, तो वे हर्ष विभोर हो उठीं किन्तु परिवार के सदस्यों के द्वारा उन्हें निराशा ही हाथ लगी। फिर भी उनके कई उपन्यास प्रकाशित होते रहे और तमाम उपेक्षाओं के बावजूद उनका सृजन कार्य विस्तारित होता रहा। तमाम लोगो ने संदेह भी किया कि एक अमीर घर की महिला, लेखिका कैसे हो सकती है? वे इसका जवाब देते हुए लिखती हैं, – ''मैं मन ही मन हँसी थी– तो इस संसार ने सुख व धनाढ्यता को एक –दूसरे का पर्यायवाची मान लिया था– जैसे हर पैसे वाला पूर्ण सुखी है– मुझे लगा अपने भीतर धुआँ–धुआँ होती इस 'इमोशंस की पावर्टी' का क्या करूँ, जो मेरे वजूद को चिथड़ा कर चुकी है।''[5]

कुसुम जी को अपनी लेखिका के रूप में पहचान बनाने के लिये काफी मशक्कत करनी पड़ी। वे चाहती थीं कि लोग उनका मूल्यांकन लेखिका के रूप में करें, किन्तु लेखक वर्ग उन्हें धनाढ्य–महिला के फ्रेम में जड़ता रहा। इसी फेर में तमाम बार कुसुम जी से प्रत्यक्ष–परोक्ष आर्थिक लाभ लेने के चक्कर में लोग लगे रहे।जिस प्रकार प्रतिभा अग्रवाल ने रंगमंच क्षेत्र की तमाम विसंगतियों और महिलाओं के संघर्ष को उजागर किया है, उसी प्रकार कुसुम अंसल ने सीरियल व फिल्म लेखन क्षेत्र की विसंगतियों को उजागर किया है कि किस प्रकार उनकी धनाढ्यता का फायदा उठाकर उनका आर्थिक शोषण किया गया और झूठे सब्जबाग दिखाए गये। लेखन क्षेत्र में भी व्याप्त राजनीतिक उठापटक और विसंगतियों को कुसुम जी ने महसूस ही नहीं किया, बल्कि प्रस्तुत भी किया है।दोनों बेटियों के ब्याह के बाद उन्होंने अपनी पी–एच0डी0 पूरी की। पति की व्यस्तता और उदासीनता के चलते वे कभी आध्यात्म ,तो कभी ज्योतिष में आकर्षित होने लगीं। उनको अपनी स्थिति टालस्टाय की पत्नी सोफिया के समान लगती है। सोफिया के ये वाक्य उन्हें कँपा जाते थे–''समय और इतिहास गवाह है, रानियाँ, महारानियाँ, बेगम या फिर सो–काल्ड बड़े लोगों की पत्नियों, इन्डस्ट्रियलिस्टों की बीबियाँ अपनी जीवन संध्या तक आते–आते बहुत सामान्य या नार्मल नहीं रह जातीं।''[6]

कुसुम अंसल का जीवन तमाम संघर्षों से रूबरू रहा है, जिसमें धनाभाव न होकर धनाढ्यता के रूप में एक चुनौती मिली है और इसी चुनौती को स्वीकार करते हुए उन्होंने न केवल अपनी पढ़ाई पूरी की, अपितु अपना लेखन कार्य भी जारी रखा।

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की 'पिंजड़े की मैना' में स्त्री जीवन के उन तमाम गहन अनुभवों का भण्डार प्रस्तुत किया गया है जिसमें लिंगभेद कूट–कूटकर भरा है। बचपन में सौनरेक्सा जी को पढ़ाई के लिए पिता का सहयोग तो मिला किन्तु माँ की उपेक्षाओं और विरोध का

सामना भी करना पड़ा। उन्हें पढ़ने का बहुत शौक था। इसके लिए वे तमाम उपाय खोजकर पढ़ाई करती थीं।

जब उनके विवाह की बात हरिवंश राय बच्चन जी के साथ होने की बात का उन्हें पता चला तो प्रतिभा अग्रवाल की भाँति वे भी खुश हो गयीं, किन्तु यह विवाह सम्पन्न न हो सका। प्रतिभा जी ने जिस प्रकार मदन बाबू के साथ विवाह किया, वैसा सौभाग्य चन्द्रकिरण जी को प्राप्त न हो सका। बड़े भाई के घर रहते उन्हें तमाम दिक्कतों का सामना करना पड़ा, क्योंकि भाभी उन्हें बोझ समझती थीं। अतः उनका विवाह कान्तिचन्द्र जी के साथ कर दिया गया जो कि बड़े अदूरदर्शी, अव्यवहारिक, ईर्ष्यालू और क्रोधी स्वभाव के थे। जो 'विचार' के उपसम्पादक थे किन्तु पत्नी की लेखन क्षमता को प्रोत्साहित करने की बजाय उनसे ईर्ष्या करते हुए उनके चरित्र के प्रति संदेह रखते थे। 'हंस' में भेजी गयी उनकी कहानी के उत्तर में सम्पादक अमृतराय का पत्र चन्द्रकिरण जी को मिला तो पति ने कडुवाहट भरे शब्दों में कहा–''ये साले सम्पादक भी लड़कियों को बड़े मीठे–मीठे पत्र लिखते हैं.....तुमने भी तो कहानी भेजते समय पत्र में कुछ न कुछ तो लिखा ही होगा जरूर..... उसके चूतड़ों में घी मला होगा''[7]

पति के गालीनुमा शब्दों को सुनकर उन्होंने पति से अलग होने केा निर्णय लिया किन्तु इस कार्य को परिणति तक न पहुँचा सकीं। उन्होंने पति के अपशब्दों से बचने का एक मार्ग खोजा–कहानी लिखकर पति को पकड़ा देती थीं, वे जहाँ चाहें उसे छपवायें। जिसका नुकसान उन्हें आर्थिक व साहित्यिक दोनों रूपोंमें उठाना पड़ा, न तो कहानियाँ ढंग से छपती और न ही पारिश्रामिक मिलता था।घर गृहस्थी के छोटे –छोटे कामों से लेकर नौकरी तक बच्चों को पालना तथा परिवार, रिश्तेदारों और कान्ति जी के मित्रों की आवाभगत करने के बीच उन्होंने अपने सृजन कार्य को जारी रखा।

पति के असन्तुलित व्यवहार, बेवजह अतिथि–सत्कार तथा पत्नी की उपेक्षा के कारण चन्द्रकिरण जी को शारीरिक व मानसिक तनाव झेलने पड़े। पति अपनी तमाम रुचियों के कारण चन्द्रकिरण जी के जीवन को कष्टमय बनाते रहे। कभी फिल्मी दुनिया के चक्कर लगाने, कभी फोटोग्राफी के शौक ने, कभी साहित्यिक सम्मेलनों के कारण चन्द्रकिरण जी प्रताड़ित होती रहीं। कान्ति जी जब डिप्टी कलेक्टर बन गये तो उनकी एय्याशी बढ़ गयी, यहाँ तक कि घर में लड़कियों को लाना शुरू कर दिया। बाद में इन्हीं सब कारणों से कान्ति जी को सस्पेंड कर दिया गया। चन्द्रकिरण जी ने घर चलाने के लिए पुनः नौकरी शुरू की और आकाशवाणी में कार्य करने लगीं। इसके साथ ही उनका लेखन कार्य चलता रहा। उनकी कहानियाँ का संग्रह 'जवान मिट्टी' प्रकाशित हुआ जिसे लेकर उनके पति बहुत नाराज हुए और इसी के चलते आगे प्रकाशकों ने उनके संग्रहों को छापने से हाथ खींच लिया। कान्ति जी लगातार पत्नी के चरित्र पर प्रश्नचिह्न लगाते रहे और तमाम लोगों से अनैतिक सम्बन्ध की बात कह उन्हें प्रताड़ित करते रहे। उम्र बढ़ जाने पर भी उनकी मानसिकता में कोई परिवर्तन नहीं आया। अन्ततः चन्द्रकिरण जी ने स्वयं को लेखन, साहित्यिक समारोह, सामाजिक समारोह से विरक्त कर लिया और अपना लेखन कर्म बन्द कर दिया। जिस महिला ने जिन्दगी भर प्रतिकूल परिस्थितियों, दाम्पत्य जीवन के कलह तथा पारिवारिक जिम्मेदारियों के बीच लेखन कार्य जारी रखा, वह लेखन कार्य पति की विकृत मानसिकता के कारण बन्द हो गया। बहुत सालों बाद उन्होंने बेटे के आग्रह पर अपनी आत्मकथा लिखी। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा जी को अन्य तमाम आत्मकथा लेखिकाओं की तुलना में ज्यादा संघर्ष करना पड़ा। अपनी साहित्यिक सर्जना को बनाए रखने के लिए वे तमाम प्रताड़नायें सहती रहीं। किसी भी व्यक्ति का सहयोग उन्हें नहीं मिला।

कृष्णा अग्निहोत्री का जीवन–संघर्ष उनकी आत्मकथा की इन लाइनों में स्वतः व्यक्त हो जाता है, ''मैंने तो जिंदगी में यह अहसास किया या कहें कि मुझे अहसास कराया गया कि अकेली रहने वाली महिला पर प्रत्येक पुरुष अपना अधिकार जमाना चाहता है– किसी की दृष्टि उसके रूपये, जायदाद या किसी की नजर उसके शरीर पर रहती है।''[8] कृष्णा जी को माता–पिता की छत्र–छाया तो मिली किन्तु 'बेटी' होने के दंश ने उन्हें स्नेह और प्रेम से वंचित कर दिया। उनका बचपन पितृसत्तात्मक नैतिक प्रतिमाओं की भेंट चढ़ गया। माता–पिता की सख्ती तथा नियम–कानून ने उनका जीवन दूभर बना दिया था। बचपन में ही घर के सारे काम उन्हें करने पड़ते थे। माँ बात–बात पर आपा खो देने वाली थी। गुस्सा और मार उन्हें निरन्तर अपनी माँ से मिलते रहे। कई बार तो माँ ने चिमटे या अन्य चीजों से उन्हें मारा। माँ की सीख थी कि वे सर झुकाकर चले। इन कठोर प्रतिमानों से उनका जीवन यातनामय बन गया। वे लिखती हैं– ''वर्जनाएँ जीवन असंतुलित कर रही थी; घर पर माँ का प्यार न पा सकने से मैं उसे उसी उम्र से इधर–उधर ढूँढती रही।''[9] कुसुम अंसल की सौतेली माँ ने जिस प्रकार उन्हें प्रताड़ित किया तथा स्नेह–प्रेम से वंचित रखा, उसी प्रकार कृष्णा जी की सगी माँ के प्रेम–स्नेह से वे वंचित रही हैं। चन्द्रकिरण, प्रभाखेतान, कुसुम अंसल तथा मन्नू भण्डारी को अपने साधारण रूप सौन्दर्य के लिए परिवार के सदस्यों तथा लोगों से उपेक्षाएँ एवं उलाहना मिली और इन लेखिकाओं के जीवन में यह एक चुनौती के रूप में थी, वहीं कृष्णा अग्निहोत्री का प्रभावी रूप–सौन्दर्य उनके लिये मुसीबत बना रहा है। इसी सुन्दर रूप काया के कारण उन्हें पुरुषों की कुदृष्टि तथा नापाक इरादों से दो चार होना पड़ा। हर कोई उनके रूप का भोगी बनने की कोशिश करता रहा।

कृष्णा अग्निहोत्री को बचपन में घर के नौकर और बड़े बुजुर्गों की काम कुंठाओं से दोचार होना पड़ा। जिस प्रकार प्रभाखेतान बचपन में घर के सदस्यों के हाथों यौन हिंसा की शिकार हुई ,वहीं कृष्णा अग्निहोत्री भी ऐसे कई उदाहरण प्रस्तुत करती हैं– ''आज सोचती हूँ कि लड़की का कोमल बचपन भी क्या पुरुष से सहन नहीं होता, वह उसे भी अपने गन्दे सुख हेतु चीर देने को आतुर रहता है।''[10] चन्द्रकिरण जी की भाँति कृष्णा जी का दाम्पत्य–जीवन सुखद नहीं था। कृष्णा जी के पति तमाम बुराइयों यथा शराब, जुआ और परस्त्रीगामिता की बुरी

आदतों में डूबे रहते थे। पति ही नहीं, बल्कि सास की प्रताड़ना भी उन्हें सहनी पड़ती थी। बेटे के आई0 पी0 एस0 होने का दंभ वे बहू में अवगुण देखकर भरती थीं। बेटे की तमाम बुराइयों को वे नजरअंदाज ही नहीं करतीं बल्कि वे उन्हें महान हैं, देवता हैं, की पदवी भी प्रदान करती थीं। वे लिखती हैं, ''और ऐसे महान व्यक्ति के किसी भी कार्य में यदि किसी ने भी दोष ढूँढा तो उसे इस धृष्टता की भरपूर सजा मिलनी चाहिए''[11] पति सत्यदेव अग्निहोत्री के इसी दंभ और दुर्गुणों के कारण लापरवाही के चलते अपनी नौकरी गवाँ दी। कृष्णा जी ने किसी तरह उन्हें दो बार बचाया। किन्तु वे सुधरे नहीं। पति–पत्नी के बीच में मधुर सम्बन्ध न होकर स्वामी व दास जैसे सम्बन्ध थे, पति ने विवाह पूर्व प्रेम सम्बन्ध के बारे में पूछा तो उन्होंने शिव कुमार जी का नाम लिया जिनकी ओर से शादी का प्रस्ताव आया था किन्तु बात आगे नहीं बढ़ पायी। पत्नी की यह सच्चाई उन्हें बर्दाश्त नहीं हुई और वे उन्हें बदचलन कहने लगे। सत्यदेव जी का विलासी और लापरवाही पूर्ण व्यवहार आगे उनकी नौकरी के लिए घातक सिद्ध हुआ और उन्हें इस्तीफा देना पड़ा।

सत्यदेव जी के व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं हुआ, आखिरकार रोज–रोज की प्रताड़ना व मारपीट से तंग आकर उन्होंने अपनी बेटी निहार के साथ घर छोड़ दिया और मायके खाण्डवा आ गयीं। यहाँ भी पिता को यह बात अच्छी नहीं लगी और पितृसत्तात्मक समाज की लिंग भेद नीति का दुष्चक्र यहाँ भी उन्हें घेरे रहा। बड़ी बहन पहले से ही मायके में रह रही थी, उन्हें देखकर पिता जी ने कहा, ''सोचा था कि तुम दोनों का ब्याह हो गया है, चलो कुछ तो मुक्ति मिली पर तुम दोनों तो फिर से छाती पर मूँग दलने वापस आ गयीं।''[12] पिता के बार–बार कहने पर भी वे पति के घर नहीं लौटीं। उन्होंने पिता जी से अनुरोध किया कि कुछ प्रापर्टी वे उनके नाम कर दे; पर यहाँ भी लिंगभेद परम्परा का निकृष्ट रूप सामने आया और माता व पिता ने इंकार कर दिया। वे सवाल करती हैं– पति का घर छोड़ने से क्या बेटी, बेटी नहीं रहती, क्या उसका खून बदल जाता है? चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की भाँति कृष्णा जी ने पति की प्रताड़ना को सहते हुए भी उनके साथ रहना स्वीकार नहीं किया और अपने अस्तित्व के निर्माण व आत्मसम्मान को बनाए रखने की कोशिश की। अपने इस नए अवतार पर वे खुद ही आश्चर्यचकित होती हैं कि जीवन का इतना बड़ा निर्णय उन्होंने कैसे ले लिया? जिस निर्णय को लेने की हिम्मत न तो चन्द्रकिरण सौनरेक्सा में थी न मैत्रेयी पुष्पा में। उन्होंने मन्नू भण्डारी की तरह हिम्मत दिखायी और जीवन के पथ पर आगे बढ़ चलीं।

अपनी आत्मकथा के दूसरे भाग 'और.....और..... .....औरत' में उन्होंने अपनी जीवन विसंगतियों से ऊपर उठकर अपनी इच्छाओं और स्त्रियोचित आवश्यकताओं को प्रदर्शित किया है। जिस प्रकार मैत्रेयी पुष्पा अपनी बोल्ड अभिव्यक्तियों को आवाज देती हैं ,उसी प्रकार कृष्णा जी नारी की सेक्स भावना को स्वाभाविक ठहराती हैं,''कई लोग स्त्री की सेक्स चाहत को अनैतिक कहते हैं परन्तु प्रकृति प्रदत्त भावनाओं के प्रभाव को मनुष्य कैसे नकार सकता है जबकि जानवर तक उससे परे नहीं हो पाते।''[13] 76 वर्ष की आयु में प्रताप से उनका प्लैटोनिक प्रेम ,अपने सौन्दर्य के प्रति लगाव उनकी उस अतृप्त इच्छा को उजागर करता है। जो जीवन भर एक सच्चे साथी के सानिध्य और सुरक्षा के अभाव में गुजरा था। यह अभाव ही एक मनोवृत्ति के रूप में इस प्रकार उनमें व्याप्त हो गया कि वे हर जगह अपने अभाव की पूर्ति को ढूंढने का प्रयास करने लगीं जिसे न तो समाज ने स्वीकारा, न ही उनके साथियों ने। इन्हीं स्थितियों, व्यवहारों के बीच वे अपने जीवन की शून्यता को लिए रहीं जो पति, प्रेमी, बेटी, भाई, माँ सबके प्रेम व स्नेह से वंचित था। असुरक्षा का भाव इस कदर था कि वे लिखती हैं–''परन्तु इस नंगे सत्य से मैं इंकार नहीं कर सकती कि भीतर बैठी औरत को सदा एक ऐसे पुरुष की प्रतिक्षा रही, जो उसे प्रेमी सा सहलाये और आलिंगनबद्ध कर इतना व्याकुल कर दे कि मेरी औरत समर्पण के लिए बाध्य हो जाये।''[14]

कृष्णा अग्निहोत्री को चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की भाँति जीवन में कभी पति से सुरक्षा भाव नहीं मिला और न ही उनकी विचारधाराओं के कारण समाज ने उन्हें सुरक्षा बोध दिया। वास्तव में कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा उन बोल्ड आत्मकथाओं में से एक है जिसमें मन की तहों को बोल्डली सामने रखने की हिम्मत जुटायी गयी है। उन्होंने स्त्रियों के प्रति नैतिक प्रतिमानों को दरकिनार किया। सौन्दर्य से लेकर सेक्स तक, हर विषय पर उन्होंने अपने विचार को बिना लाग लपेट के सामने रखा। निर्णय लेने में वे चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की भाँति डरी नहीं, बल्कि प्रभा खेतान की तरह उन्होंने जो सोचा वही किया। ठीक ही लिखा गया है कि, ''कृष्णा अग्निहोत्री की आत्मकथा पुरुष अहं और स्वार्थ से पीड़ित नारी की काटों भरी जिन्दगी की दास्तान है, जिसमें ऐसी नारी का व्यक्तित्व उभरता है जो हर प्रकाशवान वस्तु को सितारा समझ लेती है, और पास जाते ही नग्न यथार्थ सामने आ जाता है। धोखा देकर फिर धोखा खाती है। अपने शून्य को भरने के प्रयास में उसे और असीम कर लेती है।''[15] कुसुम अंसल, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, प्रभा खेतान की भाँति मन्नू भण्डारी भी बचपन में अपने साधारण रूप सौन्दर्य के कारण कुण्ठा से ग्रसित थीं। वे लिखती हैं–''मैं काली हूँ। बचपन में दुबली और मरियल भी थी। गोरा रंग पिता की कमजोरी थी सो बचपन में मुझसे दो साल बड़ी खूब गोरी, स्वस्थ व हँसमुख बहन सुशीला से हर बात में तुलना और उसकी प्रशंसा ने ही क्या मेरे भीतर ऐसे गहरे हीन भाव की ग्रन्थि पैदा नहीं कर दी कि नाम, सम्मान व प्रतिष्ठा पाने के बावजूद आज तक मैं उससे उभर नहीं पायी।''[16] प्रभा खेतान को भी अपनी माँ से इसी प्रकार की उपेक्षाएँ मिलती थीं। बचपन में ही प्रतिभा सम्पन्न मन्नू भण्डारी ने तमाम बड़े–बड़े लेखकों के साहित्य को पढ़ डाला, जिसने उनकी सोच को व्यापक बनाने के साथ–साथ विद्रोही भी बना दिया। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा और मन्नू भण्डारी दोनों ने ही बचपन से ही साहित्य का अतिशय ज्ञान प्राप्त किया किन्तु दोनों के व्यक्तित्व में परस्पर विरोध नजर आता है। जहाँ चन्द्रकिरण सौनरेक्सा सब कुछ सहती चली आयीं, वहीं मन्नू भण्डारी ने साहित्य से विद्रोही प्रवृत्ति को आत्मसात कर लिया। इस प्रवृत्ति को शीला अग्रवाल जैसी

टीचर ने और तीव्र कर दिया ,तभी तो वे लिखती हैं, ''जब रगों में लहू की जगह लावा बहता हो तो सारे निषेध, सारी वर्जनाओं और सारा भय कैसे ध्वस्त हो जाता है। यह तभी जाना और अपने क्रोध से सबको थरथरा देने वाले पिता जी से टक्कर लेने का जो सिलसिला शुरू हुआ था, राजेन्द्र से शादी की, तब तक चलता ही रहा।''[17] इसके तमाम उदाहरण यथा स्कूल में लड़कियों का नेतृत्व और शहर के मुख्य चौराहे पर भरी सभा में भाषण आदि हैं। शीला अग्रवाल, पुष्पमयी बोस जैसी अध्यापिकाओं के सान्निध्य में उनका व्यक्तित्व निखरा। अध्ययन–अध्यापन से लेकर साहित्यिक सृजन तक के क्षेत्र में इन दोनों लोगों ने मन्नू के व्यक्तित्व को निखारा। वे शीला अग्रवाल के बारे में लिखती हैं– ''उनके लिए मन में जो एक लगाव भरा सम्मान था, वह शायद मुझे कभी तटस्थ नहीं रहने देता, और बिना तटस्थता के कलम उठाना लेखिकीय कर्म के प्रति बेईमानी होती।''[18]

मन्नू भण्डारी की साहित्य सर्जना जारी रही और तमाम साहित्यिक सम्मेलनों में वे सक्रिय भाग लेती रहीं, इसी समय उनकी मुलाकात राजेन्द्र यादव से होती है जो लेखक के रूप में अपनी पहचान बना रहे थे। राजेन्द्र यादव के साथ मित्रता में वे सपनों व रोमांस की दुनिया में जीने लगीं। इसकी परिणति तब होती है जब राजेन्द्र यादव मन्नू जी की बहन सुशीला के सामने मन्नू के साथ विवाह का प्रस्ताव रखते हैं और उनका प्रेम विवाह हो जाता है। प्रतिभा अग्रवाल की भाँति उनका राजेन्द्र यादव के प्रति प्रेम प्रथम नजर का प्रेम नहीं था ,बल्कि सहचर से उत्पन्न हुआ था। किन्तु इस सहचर के प्रेम में भी वे पति के वास्तविक चरित्र को नहीं समझ सकीं। जल्दी ही उनका यह भ्रम तब टूटा जब राजेन्द्र यादव ने कहा–''देखो छत जरूर हमारी एक होगी, लेकिन जिन्दगियाँ अपनी–अपनी होगीं, बिना एक –दूसरे की जिन्दगी में हस्तक्षेप किए, बिल्कुल स्वतंत्र मुक्त और अलग।''[19] यह सुनकर मन्नू जी को बहुत आघात लगा किन्तु इससे बड़ा आघात यह था कि राजेन्द्र यादव अपनी पूर्व प्रमिका मीता से जुड़े थे। अपनी प्रेमिका को राजेन्द्र जी ने आश्वस्त किया– ''शादी मैंने जरूर मन्नू से कर ली है पर हमारा तुम्हारा सम्बन्ध तो जैसा है, वैसा ही रहेगा। शादी में वैसे भी मेरा कोई विश्वास नहीं.....सो यह सम्बन्ध मेरे–तुम्हारे बीच कभी बाधा नहीं बन सकेगा।''[20] मीता प्रकरण के बाद मन्नू जी ने उनसे अलग होने का निर्णय लिया लेकिन वे ऐसा नहीं कर पायीं। इस निर्णय को परिणित होने में तीस वर्ष लग गए, जिस प्रकार चन्द्रकिरण सौनरेक्सा जी चाहकर भी अपने पति से अलग नहीं हो पायीं, उसी प्रकार मन्नू भण्डारी भी तीस वर्ष तक उनसे अलग होने,का कठोर निर्णय न ले सकीं।

लेखक, सम्पादक और दलित तथा नारी विमर्श के पुरोधा राजेन्द्र यादव अपनी पत्नी के प्रति कभी संवेदनशील नहीं रहे। दाम्पत्य जीवन के इस दंश के बावजूद वे पति को छोड़ पाने की हिम्मत न जुटा पायीं।राजेन्द्र यादव एक प्रसिद्ध लेखक के रूप में विख्यात थे लेकिन मन्नू भण्डारी ने कभी उनके सम्पर्क–सम्बन्ध को अपने लिए किसी लाभ या महत्वाकांक्षा का साधन नहीं बनाया। बल्कि वे खुद ही राजेन्द्र यादव को कई बार मदद कर चुकी थीं। इसी बीच मन्नू जी की साहित्यिक ख्याति 'आपका बण्टी' और 'महाभोज' के माध्यम से फैल चुकी थी। दाम्पत्य जीवन में खटास के लिए वे राजेन्द्र यादव के अहम्, सामंती मनोवृत्ति एवं प्रेमिका–प्रेम को मानती हैं। किन्तु वे इस बात को भी स्वीकारती हैं कि राजेन्द्र यादव के सम्पर्क से ही उन्हें लिखने की प्रेरणा मिलती थी, पर इस बात को भी उन्होंने स्वीकार किया है, ''इसलिए जब तक मेरे व्यक्तित्व का लेखक–पक्ष सजीव–सक्रिय रहा, चाहकर भी मैं राजेन्द्र से अलग नहीं हो पायीं.....लेकिन जैसे–जैसे मेरा लेखक निर्जीव और निष्क्रिय हो गया, मेरे भीतर की स्त्री सजीव होती चली गई; अपना पूरा वजूद पाते ही उस स्त्री के लिए न साथ रहना सम्भव रह गया था, न उस सम्बन्ध को निभा पाना, सो वह साथ छूटा–सम्बन्ध टूटा।''[21]

राजेन्द्र यादव के साथ वैवाहिक सम्बन्धों में बढ़ती खटास के कारण मन्नू भण्डारी न केवल 'न्यूरोलजिया' जैसी लाइलाज घातक बीमारी हुई, बल्कि उनका लेखन–कार्य भी पिछड़ता चला गया। राजेन्द्र यादव ने कभी भी घर, परिवार और बच्ची की जिम्मेदारी नहीं समझी, बल्कि अपनी साहित्यिक रंगीनियों में खोये रहे, उधर मन्नू जी नौकरी, घर चलाने से लेकर बच्ची पालने तक की सारी जिम्मेदारी खुद उठाये रहीं। राजेन्द्र यादव और लड़कियों के प्रति उनके झुकाव की जड़ का मन्नू जी मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करती हैं ।वे उनकी अपंगत्व की पूर्ति लेखन से जोड़कर देखती हैं। वे लिखती हैं, ''लड़कियों के निश्छल, निःस्वार्थ समर्पण ने इनके भीतर प्यार की ऊष्मा नहीं जगाई.....जगाया तो विजय का दर्प।''

साहित्यिक जगत के उठा–पटक तथा सम्मेलनों में 'राजनीति' का भी उन्होंने वर्णन किया।मन्नू जी के फिल्म, दूरदर्शन और रंगमंच से जुड़ने पर लेखिका पर व्यावसायिक लेखन करने का आरोप लगाया गया। पर उन्होंने किसी बात की परवाह नहीं की, बल्कि इस आरोप का उत्तर भी उन्होंने आत्मकथा में दिया, ''सारे व्यावसायिक लटकों झटकों–झटकों से मुक्त होकर ही मैंने साहित्यिक कृतियों के नाट्य–रूपान्तरण किए थे और मेरे ऊपर किसी भी निर्माता–निर्देशक का कभी भी किसी तरह का कोई दबाव नहीं रहा था।''[22]

कुसुम अंसल, कृष्णा अग्निहोत्री की भाँति प्रभा खेतान को बचपन में माँ से प्रेम व स्नेह नहीं मिला। मन्नू भण्डारी की भाँति उनका साधारण रूप सौन्दर्य इस प्रेम से वंचित रहने का कारण बना। वे लिखती हैं–''माँ ने प्यार नहीं किया, यह तो समझ रही थी क्योंकि मैं ठहरी काली। माँ की तरह गोरी नहीं। मैं बहुत शान्त, गीता की तरह स्मार्ट नहीं, मुँह पर फटाफट जवाब नहीं दे पाती, लेकिन मैं पढ़ने में तो अच्छी थी, क्या यह काफी नहीं था?''[23] नौ साल की उम्र में ही पिता का साया उठ गया था। माँ की जगह दाई माँ ने पाला और वे दाईमाँ की बेटी हो गयीं। प्रेम– अभाव तथा असुरक्षा की इसी भावना ने डॉक्टर सर्राफ के साथ उनके प्रेम सम्बन्धों को बनाए रखने में भूमिका अदा की। आत्मनिर्भर होने के बावजूद भी वे अपनी आयु से दुगुने व्यक्ति व पाँच सन्तानों के पिता डॉ0 सर्राफ को तमाम जग हँसायी के बाद भी छोड़ नहीं पायीं, क्योंकि

डॉ0 सर्राफ से उन्हें, पत्नी न होते हुए भी, प्रेमिका का सुरक्षा बोध था। यह सुरक्षा बोध उन पर इस कदर हावी था कि वे शादी जैसी संस्था में खुद को न बाँध पायीं और न डॉ0 सर्राफ से अलग हो पायीं। डॉ0 सर्राफ भी अपनी पत्नी को न छोड़ पायें। वे स्वीकार करती हैं कि पिता के अभाव की क्षतिपूर्ति डा0 सर्राफ के रूप में मिली। वे लिखती हैं– ''डॉ0 साहब मेरे लिए सुरक्षा के प्रतीक थे। मानो उनके लिए मैं जिन्दा थी, उनको कुछ हो जाये, ऐसा मैं सोच भी नहीं पाती। डॉ0 साहब मेरे लिए बरगद की छाँव थे।''[24]

डॉ0 सर्राफ के साथ उनके सम्बन्धों को लेकर उन्हें तमाम आलोचनाओं, उपेक्षाओं व बेइज्जतियों को सहना पड़ा। डॉ0 सर्राफ की ब्याहता वे कभी बन नहीं पायीं। डॉ साहब ने अपने परिवार को कभी छोड़ा नही और प्रभा खेतान से अपने सम्बन्धों को कभी खत्म नहीं किया। प्रभा जी लिखती हैं – ''प्यार को कार्य रूप में परिणत करने के लिए जिस साहस की जरूरत पड़ती है हमारे पास वह नहीं था, हम दोनों बड़े बुझदिल इंसान थे।''[25] प्रभा खेतान अपने को 'राजा नील की सुओरानी' समझती रहीं। भारत से लेकर अमेरिका तक प्रभा जी की आर्थिक उपलब्धियाँ जितनी ख्यातिपूर्ण थी, उनका व्यक्तिगत जीवन उतना ही चर्चित और विवादास्पद था। लोगों ने उनको रखैल, दूसरी बीबी.....जैसी तमाम अपमानजनक उपाधियाँ दीं, किन्तु वे इस कदर इस सम्बन्ध में खोई हुई थीं कि उनकी चेतना ने कहीं और जाने की जरूरत ही नहीं समझी। वे खुद लिखती हैं, ''मैं विवाहित होकर किसी से अफेयर चलाये रखती, कुछ दिनों तक, तब भी ठीक था लोग स्वीकार लेते, आवारगी को समाज स्वीकार लेता है। मगर अविवाहित रहकर एक विवाहित पुरुष, पाँच बच्चों के पिता के साथ टंगे रहना, भला यह भी कोई बात हुई।''[26]

अन्य आत्मकथा लेखिकाओं से अलग उन्होंने साहित्य, नाटक रंगमंच की जगह व्यवसाय में अपना कैरियर बढ़ाया। तमाम तरह के बिजनेस और तमाम बार असफलता के बावजूद अन्ततः वे सफल चमड़ा व्यवसायी बनीं और 'कलकत्ता चैम्बर ऑफ कामर्स' की प्रथम महिला अध्यक्ष बनने का अवसर प्राप्त हुआ। मारवाड़ी समाज जिससे, वे सम्बन्धित थीं, के तमाम विरोध के बावजूद उन्हें यह पद प्राप्त हुआ। मारवाड़ी समाज की तमाम विसंगतियों को उन्होंने तीव्र विरोध ही नहीं, बल्कि तमाम शोषणों को सहते हुए भी आगे बढ़ी। वे लिखती हैं–''अजीब समाज है यहाँ सिर्फ कुँवारी कन्या और पत्नियों की जरूरत है। बाकि कौन बची? विधवायें और वृद्धायें तो तीरथ में रहती हैं या बड़े दिन की छुट्टी में जब कलकत्ता क्रिकेट और पिकनिक से गुलजार रहता है तो ये औरतें मुरारी बापू एवं आसाराम बापू का प्रवचन सुनने जाती हैं।''[27]

जिस प्रकार मन्नू भण्डारी, राजेन्द्र यादव की तमाम कमियों के बावजूद उनको छोड़ने में तीस वर्ष का समय लगाती हैं वहीं प्रभा खेतान छोड़ने का निर्णय ही नहीं ले पातीं। वे लिखती हैं– ''लेकिन निर्णय की तमाम स्वतंत्रता के बावजूद डॉ0 साहब को छोड़ने के नाम से मैं कातर हो जाती, आँखें बरसने लगती, वापस उसी मुकाम पर डटे रहने के लिए मेरा मन नये–नये नुक्से तलाशने लगता।''[28] डॉ0 सर्राफ जब अन्य स्त्री के चक्कर में रमने लगे तो प्रभा खेतान ने भी किसी अन्य से रिश्ता कायम करने का प्रयास किया किन्तु बुद्धि और हृदय के इस द्वन्द्व में हृदय की ही जीत होती है, और वे प्रेम व वासना के अन्तर को समझती हैं। कृष्णा अग्निहोत्री की भाँति वे सुरक्षा किसी अन्य में तलाशने की कोशिश नहीं करती हैं बल्कि डॉ0 सर्राफ के अन्य रिश्तों के बावजूद अपने प्रेम और सुरक्षा बोध को सदैव उन्हीं के साथ जोड़े रखती हैं। ऐसा नहीं है कि वे परिवार, बच्चे–पति नहीं चाहती थीं, किन्तु बचपन में पिता का अभाव, माँ का स्नेहशून्य होना, परिवार के सदस्य के द्वारा इनका बाल–यौन शोषण और निरन्तर साधारण रूप सौन्दर्य के कारण मिलने वाली पारिवारिक उपेक्षा ने उनके अन्दर एक ऐसी ग्रन्थि बना दी, जिससे वे कभी बाहर नहीं निकल पायीं और वे स्वच्छंदता में ही सार्थकता समझने लगीं। किन्तु सवाल यह भी है कि नारी की सार्थकता परिवार और गृहस्थी में ही क्यों ढूँढ़ी जाए, इससे ऊपर भी बहुत कुछ है। कुसुम अंसल, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा अग्निहोत्री ने परिवार और गृहस्थी की सन्त्राशा को झेला और अकेले रहने के विकल्प के बारे में सोचा। कृष्णा अग्निहोत्री और मन्नू भण्डारी काफी वर्षों तक इसे झेलने के बाद अलग हो पायीं। कुसुम अंसल, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ऐसा नहीं कर पायीं। किन्तु प्रभा खेतान ने उस रास्ते पर जाने की कोशिश ही नहीं की जहाँ से लौटकर फिर आना हो। डॉ0 सर्राफ से वे विवाह कर नहीं सकतीं थीं और किसी और से प्रेम नहीं कर सकती थीं; अतः उन्होंने अलग रास्ता चुना।ठीक ही लिखा गया है ,''अन्या से अनन्या' प्रभा खेतान नामक लेखिका की स्थिति का इतिवृत्त भले ही हो, भारतीय नारी की दशा दिशा का दर्पण तो यह निश्चित ही है।''[29]

प्रभा खेतान की भाँति मैत्रेयी पुष्पा का बचपन पिता के अभाव में गुजरा। माँ कस्तूरी ने बेटी, ससुर तथा परिवार चलाने के लिए कठोर संघर्ष किया। पति की मृत्यु पर कस्तूरी रोयी नहीं बल्कि लोगों के उलाहनाओं का दो–टूक उत्तर दिया–''यह मेरे बस का नहीं है चाची, क्योंकि अब मैं अपनी जिन्दगी और बेटी की नन्हीं जान को लेकर ही सोच पाती हूँ, मुझे लोग धिक्कार रहे हैं, पर कैसे समझाऊँ कि मेरे सामने आने वाले दिन बाघ की तरह मुँह फाड़े खड़े हैं। मैं आने वाली घड़ियों से छुटकारा पाकर बच जाऊँगी? हर हाल में सामना करना होगा।''[30] ससुर को भरोसा दिलाकर तथा तमाम लोगों की बातों को नजर अंदाज कर वे पढ़ायी करने लगीं और नौकरी प्राप्त की। किन्तु इन सब में उनके मन में गृहस्थ जीवन के प्रति नकारात्मक दृष्टि, वितृष्णा और अलगाव की भावना पैदा होती है इसीलिए वे नहीं चाहती थीं कि बेटी वैवाहिक जीवन के चक्कर में पड़े और पुरुष की गुलामी करे। मैत्रेयी लिखती हैं कि माँ उन्हें सलाह देती हैं–''स्त्रीत्व माने स्त्री शक्ति तू उस स्त्री–शक्ति को गँवाने पर तुली है, मुसीबत तो यही है।''[31] किन्तु सत्रह साल की उम्र में ही मैत्रेयी माँ से अपना विवाह करने के लिए कहती हैं, इसका कारण असुरक्षा का भाव था क्योंकि पिता के संरक्षण के अभाव तथा माँ की व्यस्तता के चलते उन्हें

पढ़ाई के लिए रिश्तेदारों के यहाँ रहना पड़ता था, जहाँ तमाम कुदृष्टि और औचक हमलों से वे परेशान थीं। दूसरी तरफ परिवारिक प्रेम के अभाव में वे दाम्पत्य जीवन में इसकी सम्भावनाएँ देखती हैं। वे लिखती हैं, ''माँ तुम खफा क्यों होती हो? मेरी स्वाभाविक इच्छाओं को कठोर उपवास में मत बदलो। मैं अपनी इन्द्रियों को कसते–कसते दूसरों की हवस का शिकार हुई जाती हूँ''[32]

मैत्रेयी की माँ उन्हें नौकरी कराना चाहती थीं किन्तु उन्होंने मना कर दिया। आखिरकार माँ ने उनके लिए लड़का देखना शुरू कर दिया। जात–पात विरोधी तथा दहेज विरोधी माँ के लिए दामाद ढूँढ़ना आसान नहीं रहा। उधर मैत्रेयी अपने सहपाठियों में अपने लिए वर तलाशने लगी। किन्तु धीरे–धीरे उनके मन में विवाह संस्था के प्रति संदेह उत्पन्न होने लगा। जिस प्रकार प्रभाखेतान विवाह–संस्था में खुद को नहीं बाँध पायी। मैत्रेयी जी विवाह संस्था की इन औपचारिकताओं और परम्पराओं के कारण संदेह होने लगता है–''वह कौन सा संसार है, जहाँ लड़की अपनी इच्छा सें जीवन–साथी चुनती है? विश्वास अर्जित करने का अवसर पाती है। हम तो इस अन्धी–बहरी दुनिया के बाशिंदे है; जहाँ उम्र आने पर एक पुरुष का हाथ थमाकर कह दिया जाता है कि यह तुम्हारा पति है, परमेश्वर है।''[33]

मैत्रेयी जी का विवाह आखिरकार एक डॉक्टर से हो जाता है। माँ से अपने विवाह की जिद् करने वाली मैत्रेयी विवाह के पश्चात् भी अपनी बोल्ड–चेतना को लिए हुए थी जिसके उदाहरण उनकी सुहागरात तथा अन्य घटनाओं में दिखायी पड़ते हैं। जिस प्रकार कुसुम अंसल की बेटी के जन्म पर परिवार में कोई प्रसन्न नहीं हुआ उसी प्रकार जब मैत्रयी ने बेटी को जन्म दिया तो किसी को प्रसन्नता नहीं हुई। वे लिखती हैं–''मनुष्य के रूप में अगर सबसे कठिन, चुनौती भरी जिन्दगी को पाया है तो स्त्री ने, या कुदरत को ही उससे बैर था? या सृष्टि के कर्ता–धर्ता की कोई साजिश.....मादा बनाने के बाद मादा होने की सजा का नाम औरत कर दिया। क्योंकि साथ में दिल दिमाग और विवेक भी दिया।''[34]

मैत्रेयी जी का व्यक्तित्व उन्मुक्त था और इस उन्मुक्ता पर पहले माँ, बाद में पति बंधन लगाने का प्रयास करते थे। वे उन्हें आधुनिक तो बनाना चाहते थे किन्तु सदैव नियंत्रण में रखना चाहते थे। वे उन्हें नौकरी भी नहीं करने देना चाहते थे इसीलिए कई बार इण्टरव्यू कॉल आयी, किन्तु उनके पति ने उसे छिपा दिया। गृहस्थी की इस बन्द जिन्दगी में मैत्रेयी ने स्वयं को सर्वथा–असहाय महसूस किया। तमाम तरह की परम्पराओं तथा रूढ़ियों को वे नकारती रहीं, जो कि स्त्री को बंधनों में जकड़े हुई थी। 'मंगलसूत्र', 'करवाचौथ' तमाम रिवाजों को वे नकार देती हैं। पति की संकीर्ण विचारधाराओं के कारण वे तलाक के बारे में सोचती हैं किन्तु चन्द्रकिरण सौनरेक्सा व मन्नू भण्डारी की भाँति कोई निर्णय नहीं ले पातीं।

मन्नू भण्डारी, कृष्णा अग्निहोत्री की भाँति मैत्रेयी ने भी साहित्यिक जगत की विसंगतियों को उजागर किया है। राजेन्द्र यादव से उनके सम्बन्धों को लेकर काफी बवण्डर मचा किन्तु अफवाहों को उन्होंने दरकिनार कर दिया। डॉ0 शर्मा ने इस समय उनको पूरा सहयोग दिया। मैत्रेयी ने 45 वर्ष की आयु में लेखन प्रारम्भ किया था, वह भी अपनी बेटी की जिद् पर। धीरे–धीरे उनकी कहानी 'हँस' में छपने लगी और तमाम कहानियाँ, उपन्यास प्रकाशित होने लगे। उनका लेखन भी उनकी बोल्डनेस से ओत–प्रोत था। जिस प्रकार उनका जीवन इस बोल्डनेस के कारण चर्चित रहा ,उसी प्रकार उनका लेखन भी। वे लिखती हैं, ''यदि मैंने अपने भीतर सुकुमारत को तोड़ न दिया होता तो सच में मैं आज मन–मोहिनी गुड़िया का अनुपम रूप होती.....लेकिन मैं सोचकर आशान्वित होती हूँ कि गुड़िया की छवि तोड़ डालने से ज्यादा मुझे कोई मुक्ति नहीं। हाँ, इस टूटन का रूप अगनपाखी के राख हो जाने जैसा है।''[35]

तमाम अन्य लेखिकाओं की भाँति मैत्रेयी पुष्पा ने दाम्पत्य जीवन की तमाम विसंगतियों के बावजूद विवाह संस्था से स्वयं को अलग नहीं किया, बल्कि समझबूझ और समायोजन के द्वारा इसको बनाए रखा। उनकी स्त्री चेतना नारी के आर्थिक आत्मनिर्भरता को ही वास्तविक या सम्पूर्ण नहीं मानती, अपितु वे सामाजिकता और परम्परा का भी महत्ता देती हैं। यद्यपि उनकी महिला–पात्र इन चीजों को नकार देती है लेकिन वे प्रभाखेतान के विपरीत इन संस्थाओं पर आस्था प्रकट करती हैं। वे लिखती हैं–''भारतीय स्त्री को न आर्थिक आत्मनिर्भरता सुखी कर सकती है, न चेतना सम्पन्नता उसकी सहायक हो सकती है। बस, उसे पारम्परिक कर्मकाण्ड सुखी और सुरक्षित रहने की गारण्टी देते हैं।''[36]

इस प्रकार इन तमाम लेखिकाओं का जीवन स्त्री चेतना की भावना से ओत–प्रोत 'संघर्षों की गाथा' रहा है। जिनका तुलनात्मक अध्ययन ही स्त्री–लेखन के वृहद पक्षों को उजागर करता है। ये आत्मकथायें सिर्फ जीवन–ब्यौरा न होते हुए, स्वानुभूति, संवेदना तथा वैचारिकता के वृहद पक्षों को उजागर करती है।

इन आत्मकथा लेखिकाओं की वैचारिक दृष्टि तथा चेतना उनके जीवन तथा परिस्थितियों से उपजी थी अतः यथार्थ की तल्ख़ी के प्रति उनकी संघर्षात्मक दृष्टि भी अलग–अलग थी किन्तु मूल बात ये है कि इन लेखिकाओं ने जीवन में संघर्ष किया, लड़कर नहीं तो लिखकर ही सही क्योंकि लिखना भी एक क्रान्ति है। सच को उजागर कर देना भी एक विद्रोह है जिसे अभी तक प्रत्यक्ष रूप से सामने नहीं रखा गया था। ये आत्मकथायें इसी को प्रस्तुत करती हैं।

**निष्कर्ष**

इन आत्मकथाओं के अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारतीय समाज में स्त्री जीवन पितृसत्तामक व्यवस्था के अधीन है। स्त्री जीवन को अधिकारहीन बना दिया गया है। उसका शोषण और उत्पीड़न होता है और किंचित इस शोषण और उत्पीड़न में स्त्रियॉ भी शामिल होती है। हिन्दी साहित्य में जो आत्मकथाएँ लिखी गयी वह स्त्रियों के निजी जीवन के आधार पर है जो कही न कही भारतीय समाज की स्त्रियों पर लागू होती है।

**अंत टिप्पणी**

1. *मोड़ जिन्दगी का, प्रतिभा अग्रवाल, पृ0– 68*

2. मोड़ जिन्दगी का, प्रतिभा अग्रवाल, पृ0–125
3. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ, डॉ0 सरजू प्रसाद मिश्र, पृ0–46
4. जो कहा नहीं गया, कुसुम असंल, पृ0–15
5. जो कहा नहीं गया, कुसुम असंल, पृ0–85
6. जो कहा नहीं गया, कुसुम अंसल, पृ0–208
7. पिंजड़े की मैना, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, पृ0–220
8. लगता नहीं है दिल मेरा, कृष्णा अग्निहोत्री, भूमिका
9. लगता नहीं है दिल मेरा, कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0–30
10. लगता नहीं है दिल मेरा, कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0–29
11. लगता नहीं है दिल मेरा, कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0–92
12. लगता नहीं है दिल मेरा, कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0–155
13. और...और...औरत, कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0–140
14. और...और...औरत, कृष्णा अग्निहोत्री, पृ0–140
15. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएँ, डॉ0 सरजू प्रसाद मिश्र, पृ0–84
16. एक कहानी यह भी, मन्नू भण्डारी, पृ0–18
17. एक कहानी यह भी, मन्नू भण्डारी, पृ0–23
18. एक कहानी यह भी, मन्नू भण्डारी, पृ0–33
19. एक कहानी यह भी ,मन्नू भण्डारी, पृ0–48
20. एक कहानी यह भी, मन्नू भण्डारी, पृ0–203
21. एक कहानी यह भी मन्नू भण्डारी, पृ0–215
22. एक कहानी यह भी मन्नू भण्डारी, पृ0–120
23. अन्या से अनन्या, प्रभा खेतान, पृ0–26
24. अन्या से अनन्या, प्रभा खेतान, पृ0–14
25. अन्या से अनन्या ,प्रभा खेतान, पृ0–287
26. अन्या से अनन्या ,प्रभा खेतान, पृ0–12
27. अन्या से अनन्या, प्रभा खेतान, पृ0–250
28. अन्या से अनन्या, प्रभा खेतान, पृ0–250
29. हिन्दी लेखिकाओं की आत्मकथाएं ,डॉ0 सरजू प्रसाद मिश्र, पृ0–111
30. कस्तूरी कुण्डल बसे, पृ0–28
31. कस्तूरी कुण्डल बसे, पृ0–61
32. कस्तूरी कुण्डल बसे, पृ0–59
33. कस्तूरी कुण्डल बसे, मैत्रेयी पुष्पा, पृ0–132
34. कस्तूरी कुण्डल बसे, मैत्रेयी पुष्पा, पृ0–309
35. गुड़िया भीतर गुड़िया, मैत्रेयी पुष्पा, पृ0–246
36. गुड़िया भीतर गुड़िया, मैत्रेयी पुष्पा, पृ0–247